तलाशे हक

मैं कैसे और क्यो अहले हदीस हुआ ?

मौलाना अब्दुल रहमान रहमतुल्लाह (फैसलाबाद)
पाकिस्तान
फाजिल दारूल उलूम देवबंद

हक को तलाश करने वालो को मंज़िल मिल ही जाया करती है

जिन के दिल मे तलाशे हक की तड़प होती है आखिर उन्हे मंज़िले मुराद मिल ही जाया करती है । हज़रत सलमान फारसी रजि0 इसे ज़ज्बे से तलाशे हक के लिये घर से निकले सफर की परेशानियां झेलते गिरते पड़ते आखिर उन्हे मंजिले मकसूद. जियारते हज़रत मुहम्मद सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम की सूरत मे मिल गई । इसी तरह हमारे अजीज आलिमे दीन फाजिले दारूल उलूम देवबंद हज़रत मौलाना अब्दुर्रहमान फैसलाबादी रहमतुल्लाह अलैह भी अपने आबाई मसलक हनफी देवबंदी से मुतमईन न थे, तलाशे हक की जुस्तजू मे लगे रहे आखिरकार अल्लाह तआला ने उन को भी राहे हिदायत नसीब फरमाई । हज़रत मौलाना इस वक्त अल्लाह को प्यारे हो चुके है अल्लाह तआला उन्हे जन्नतुल फिरदौस मे अआला मकाम अता फरमाए (आमीन) उन्होने मसलक अहले हदीस कैसे और क्यो कूबूल किया ये आप को उन की अपनी ही तहरीर पढ़कर मालूम होगा जो हम आप की खिदमत मे हफ्ता रोजा अहले हदीस लाहौर, जिल्द नंबर 16, शुमारा नं0 46 से उन के शुक्रिया के साथ पेश करने की सआदत हासिल कर रहे है । उम्मीद है कि मौलाना मरहूम की ये तहरीर बहुत से मुक्कलिद भाईयो के लिये भी हिदायत का बाईस बनेगी । इंशाल्लाह

मै अहले हदीस क्यो हुआ ?

बंदा हनफी देवबंदी मसलक का पैरूकार था और दारूल उलूम देवबंद से फारिग होकर अर्सा तक इसी मसलक पर अमल पैरा रहा फिर तहकीक करके 1966 मे मसलक अहले हदीस को इख्तियार किया और इसका बकायदा अखबारात मे एलान भी किया फिर भी बहुत से लोग पूछते है तुमने ऐसा क्यो किया ?

इस के जवाब मे ये चंद पेज तहरीर कर रहा हू जिस मे अपनी जिन्दगी के मुख्तलिफ हिस्से बताए है जिन से गुजर कर ये तहकीक के बाद इस मकाम पर पहुंचा जिस का एलान करना जरूरी समझा नीज ये भी बताया है कि जहां तक सहीह मसलक का ताल्लुक है तो वो सिर्फ मसलक अहले हदीस है ।

मसलक अहले हदीस यही है कि कोई बात इस वक्त तक तस्लीम न की जाए जब तक वो कुरआन व हदीस के मुताबिक न हो और अगर कुरआन व हदीस के खिलाफ किसी बड़े से बड़े आलिम की बात भी आ जाए तो वह भी काबिले कूबुल नहीं । हम अल्लाह तआला और इस के रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि के मुकाबले मे न किसी आलिम की बात को सनद और दलील मानते है और न ही किसी इमाम की ज़ाती राय को शरीयत मानते है बल्कि सहाबा किराम रजि0 के भी सिर्फ वही इरशादाद काबिल कुबूल है जो किताबुल्लाह और सुन्नते रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम के मुताबिक हो यही मेरा मसलक है ।

मेरी जिन्दगी का पहला दौर

मैं एक किसान घराने मे पैदा हुआ जब से होश संभाला वालदैन और माहौल से तीन अकीदे सीखे –

1 हमारा खालिक अल्लाह है और इस का कोई शरीक नहीं ।

2 हमारे पैगम्बर हज़रत मुहम्मद सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम है
और हम आप के उम्मती है ।

3 मरने के बाद दोबारा जिन्दा करके हमारे आमाल का हिसाब किताब लेगा और फिर बहिश्त या दोज़ख मे भेज देगा ।

इसी तरह मैने उन से ये अकीदा भी हासिल किया कि हम हन्फी है ओर हमारा मज़हब हन्फी है । यानि हम इमाम अबू हनीफा रह0 के मुकल्लिद है । कमउम्री के वक्त ज़ेहन मे न किसी तनकीद की काबिलियत होती है और न ही कोई इंसान अकाईद पर तनकीद करना पसंद करता है सो मैने भी इन्ही अकाईद को अपने लिये पसंद कर लिया और दिलोजान से इस चीज को इख्तेयार कर लिया कि यही वह अकाईद है जिन की बिना पर एक आदमी अपने आप को मुसलमान समझता है । कलमा तय्यबा तो हम लोग सिर्फ पढ़ते है अल्फाज का मतलब कुछ नहीं समझते, मै ने भी कलमा पढ़ना अपने माहौल से सीख सीख लिया और मायने व मतलब से कोई गर्ज न रखी इस के बाद मैं इस्लामी तालीम हासिल करने के लिये घर से रूखसत हो गया और मुखतलिफ उस्तादे किराम से बेशुमार उलूम फनून पढ़ता रहा सिर्फ मन्तक, फलसफा, फिकहा, उसूले फिकहा वगैरह और जब उन उलूम के बारे मे अस्ताजह से पूछा जाता कि हम ये उलूम क्यो पढ़ रहे है तो वह ये बताता कि इन उलूम के ज़रिये कुरआन व हदीस को इंसान अच्छी तरह समझ सकता है । गोया उन उलूम की तालीम कुरआन व हदीस समझने की लिये जिम्मेदार थी । इस पर मुझे बारहा अपने असताजा से ये अर्ज करना पड़ता कि आप उन उलूम के साथ साथ कुरआन व हदीस भी पढ़ाईये तो जवाब ये मिलता कि उन से फारिग होकर तुम आखिरी साल दौरा हदीस पढ़ोगे तो उस वक्त आप को कुरआन व हदीस का उलूम हासिल हो सकेगा ।

ये पहला मौका था कि मेरे दिल को इस तर्जे अमल से एक धचका सा लगा मगर ये वाकई हादसा था जो दिल मे आया और गुजर गया और मेरे उस्तादो का इस मे कोई कसूर भी ना था इस लिये कि सारे माशरे मे वो निसाब तालीम पढ़ा और पढ़ाया जा रहा था जो शाहजहां के दौर मे एक सरकारी आलिम मुल्ला निज़ामुद्दीन ने मर्तब किया था और इसी लिये इस निसाब का नाम भी दर्से निज़ामी है और अहले हदीस के अलावा सब शिया, सुन्नी, बरेलवी, और देवबंदी यही निसाब आज तक पढ़ते पढ़ाते आ रहे है तो मेरे उस्ताद भी इसी माशरे मे रहते थे इस लिये उन्होने भी यही निसाब पढ़ाना था और पढ़ाया । मेरे इन उसताद मे से बाज़ तो बुलंद दर्जे के आलिम थे कि इन के फैज से रब ने मुझे दौलते इल्म से नवाजा और मेरे दिल से हमेशा इन के लिये दुआएं निकलती है ओर इन उलमा किराम ने ही मेरा ये ज़हन बनाया कि जो इल्म तुझे पढ़ाया जा रहा है ये खुदा कि तरफ से अमानत है जो हम तेरे सुपुर्द किये जा रहे है अब ये तेरा फर्ज है कि ये अमानत इसी तरह दूसरे लोगों तक पहुंचा दो । इसी तलकीन से मुत्तासिर होकर मै ने जिन्दगी के इब्तादाई दस साल तालीम हासिल करने के लिये वक्फ किये और फरागत के बाद

भी बीस साल तालीम का काम करता रहा । अलहम्दुल्लिाह ये काम मैने खालिस रज़ा ए इलाही के लिये किये, अल्लाह तआला कुबूल फरमाए (आमीन)

मेरा दूसरा दौर

बहरहाल जब इल्मी दौर का वह आखिरी साल आया जब मुझे दौरा हदीस पढ़ना था तो मै इल्मे हदीस हासिल करने के लिये हिन्दुस्तान गया देवबंदी मसलक के मशहूर मदरसा दारूल उलूम देवबंद मे चोटी के उलमा से दौरा हदीस पढ़ा जिस मे मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी भी शामिल थे जो पाकिस्तान मे शेखूल इस्लाम के मंसब पर रहे है । उन तमाम उस्तादो किराम का इल्म हर किस्म के शक व शुबहा से बाला था उन का तकवा व दयानतदारी मुस्लिम थी मगर तरीका तालीम तो वही था जो तमाम हनफी उलमा मे था, चुनांचे दौरा हदीस के दौरान मेरे दिल को दो बातो से जबरदस्त धचका लगा अव्वल ये कि दौरा हदीस मे हदीस की छै किताबे पढ़ाई जा रही थी जिन को सिहाह सित्ता कहते है । यानि सहीह बुखारी, सहीह मुस्लिम, सुनन अबू दाऊद, सुनन तिर्मिजी, सुनन नसई, और सुनन अबू माज़ा । इन सब किताबो के मुसन्निफो (लिखने वाले) मे से कोई एक भी किसी इमाम का मुक्कलिद नहीं था । और मेरे दिल पर ये बात भी बहुत गरा गुजरी की हदीसे जमा करने वाले मुहद्दिस उलमा मे से कोई भी हनफी नहीं और न हनफी उलमा की कोई हदीस की किताब हमारे दर्स मे शामिल थी क्योकि अहनाफ के हां ऐसी किताब है ही नहीं । दूसरी बात जिस से मेरे दिल को जबरदस्त चोट लगी वो हमारे असातज़ा का साल भर इन हदीसो की तावीलो पर तकरीर करना था जो हनफी फिकहा के खिलाफ थी । हत्ता की बाज़ हदीसो पर तो दस दस दिन और महीना महीना तकरीरे होती रहती जिन को हम तुलबा (विद्यार्थी,शार्गिद) याद भी करते और लिखते भी थे मगर इन तकरीरो की हैसियत महज गलत तावीलो के सिवा कुछ भी नहीं था । मुझे याद है कि हमारे साथ दौरा हदीस मे जज़ीरा (टापू) मालाबार का एक शाफाई तालिबे इल्म भी शरीक था वो कहा करता था हमारे असाताज़ा अपने मज़हब के मसाइल को दलाईल की बजाए मुक्को के ज़ोर से साबित करते है । और बाज़ असाताज़ा तो दौराने दर्स जोश मे जोर जोर से तिपाई पर मुक्के भी मारा करते थे । इस सुरते हाल से मेरा ज़हन मुत्तासिर हुए बगैर न रह सका मगर इस के बावजूद बीस साल मैं सिर्फ इस कदर फिकहा की तरदीद किया करता था कि जो मसाइल फिकहा मे गिरोही (आम) नहीं बल्कि शहंशाहो और जागिरदारो को खुश करने के लिये लिखे गये है वो गलत है । तो मेरी इस तरदीद से हनफी उलमा नाराज़ हो जाया करते थे मगर इंसाफ पसंद और तालीमयफ्ता हज़रात इस को पसंद करते थे । खुलासा ये कि मेरे ज़हनी इंकलाब का ये दूसरा वाक्या था ।

मेरा तीसरा दौर

तीसरा वाक्या ये हुआ कि मै अपने बीस साला दौरे तरदीस मे तुलबा को तर्जुमा कुरआन और हदीस की इब्तदाई किताब मिश्कात शरीफ का दर्स लाज़मी दिया करता था और ये दोनो मजमून हनफी निसाब मे दाखिल नहीं थे । शुरू मे तालिबे इल्म मुखलिस होते थे और वो मेरे इस काम की कदर करते थे मगर तकसीमे मुल्क के बाद तालिबे इल्म मेरे इन जबरी काम को बेगार समझने लगे और मुल्क के हर कोने से मुझे इस काम पर लानत भेजी

जाने लगी कि वो सख्त तबीयत का मालिक है और तुलबा से जबरन बेगार लेता है, उनको जबरन तर्जुमा कुरआन और मिश्कात शरीफ नहीं पढ़ाना चाहिये । मै अपने खिलाफ इस किस्म के ताने और इल्ज़ामात सुनता तो मेरी तबीयत ऐसे तालिबे इल्मो से बेज़ार हो जाती कि इंसानो के लिखे हुए उलूम को तो शौक से पढ़ते है मगर अल्लाह और उस के रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम के अता करदा उलूम को पढ़ना बेगार समझते है । ऐसे लोगों को पढ़ा कर आलिम बनाकर मुझे अल्लाह के घर क्या अजर (बदला) मिलेगा ? क्योकि मै उन को दुनिया के माल व मताअ के लिये तो नहीं पढ़ा रहा था मै तो सिर्फ रज़ा–ए–इलाही के लिये पढ़ा रहा था तो जब अल्लाह की किताब और पैगम्बर सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम की हदीस के साथ उन का ये बर्ताव है तो उन को पढ़ाने से न पढ़ाना ही बेहतर है ।

मेरा चौथा दौर

चौथा वाक्या ये हुआ कि आज कल दीनी मदारिस भी दुकानदारी बन कर रह गई है । और दीनी इल्म पढ़ने पढ़ाने वालो ने भी अपना मकसद दुनिया हासिल करना ही बना लिया है, सदाकत और अमानतदारी से ये कोसो दूर है जैसा कि 1963 की बात है कि लायल पूर (फैसलाबाद) शहर मे नमाज़े तरावीह का इख्तलाफी मसला छिड़ गया मुझे अच्छी तरह याद है कि मंटगमरी बाजार की मस्जिद अहले हदीस मे एक जलसा आम मे इमाम मुनाज़िर हज़रत मौलाना अहमद साहब मरहूम व हज़रत मौलाना हाफिज अब्दुल कादिर रह0 ने यह चैलेज करके कहा कि अगर बीस रकअत नमाज तरावीह कोई हनफी आलिम साबित करना चाहे तो हम मुनाज़रा के लिये तैयार है मेरे मदरसा के दो तालिबे उलमो ने रूक्का लिखा कि हम इस के लिये तैयार है उन्होने ने वापिस आकर मुझ से मुनाज़रा के लिये कहा तो मै ने कहा मुनाज़रो से मसाइल साबित नहीं हुआ करते । मै जल्द ही नमाज तरावीह पर एक रिसाला लिखने वाला हूं फिर जब मै ने रिसाला लिखने का अज्म किया तो चूंकि मै भी दूसरे हनफी उल्मा की तरह दीगर उलूम व फनून का तो माहिर था, मगर हदीस चूंकि हमारे हा कोई पढ़ता ही नहीं था इस लिये हदीस मे मुझे भी कोई महारत न थी । चुनांचे मै रिसाले का मटेरियल हासिल करने के लिये मौलाना सरफराज खान सफदर के पास ककहड़ गया क्योकि वो अहले हदीस मसलक के खिलाफ इख्तेलाफी मसाईल पर किताबे लिखते रहते थे तो उन्होने ने मुझे बीस रकअत तरावीह के हक मे दो दलील पेश की एक मुवत्ता इमाम मालिक रह0 की रिवायत थी जिस मे रावी बयान करता है कि हज़रत उमर रजि0 के ज़माने मे लोग रमज़ान की रातो मे बीस रकअत तरावीह कयाम किया करते थे । मौलाना सरफराज़ ने कहा चूंकि ये मुवत्ता की रिवायत है इस लिये ये मुसतनद है और दूसरी दलील ये पेश की की सुनन बैहकी मे रिवायत है कि नबी अकरम सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम ने तीन दिन बा जमाअत जो नमाज तरावीह पढ़ाई थी वो बीस रकअत थी । मौलाना सरफराज खान सफदर ने फरमाया कि इस रिवायत मे अबू शैबा एक रावी है जिसको अहले हदीस जईफ करार देते है मगर अस्माए रजाल की किताब मीज़ान अअला मे लिखा है कि इमाम बुखारी रह0 ने इस रावी को जईफ करार नहीं दिया और मुझे मीजान आला की ये इबारत नकल कर दिखाई और लिखवाई । इबारत यू है कि अबू शैबा का जिक्र करते हुए मुसन्निफ लिखता है कि 'सकता अन्दल बुखारी' यानि इस रावी के बारे मे इमाम बुखारी रह0 ने खामोशी इख्तेयार फरमाई । मौलाना साहब ने फरमाया कि 'सका' मतलब ये है कि इमाम बुखारी रह0 ने इस रावी पर कोई तनकीद नहीं की और जब इमाम बुखारी रह0 तनकीद नहीं करते तो दूसरे मुहद्दिसीन की तनकीद की क्या अहमियत है मै ने वापिस आकर रिसाला लिख कर शाया कर दिया और ये

इबारत भी लिख दी इस पर एक अहले हदीस आलिम की तरफ इश्तेयार शाया हुआ कि अगर मौलाना अब्दुल रहमान ये साबित कर दे कि बुखारी रह0 ने अबू शैबा को जईफ करार नहीं दिया तो मै मौलाना साहब को एक हज़ार रूपये का इनाम दूंगा । जब मुझे ये इश्तेयार पहुंचा तो बड़ी हैरत हुई कि मीज़ान अला मे ये इबारत मैने खुद देखी है तो फिर ये चैलेन्ज कैसा ? फिर मैने सोचा शायद जो जुमला मै ने नकल किया है इस के इसमे कोई इबारत रह न गई हो जो मैने न देखी हो, चुनांचे मैने बा हालत रोज़ा लाहौर का सफर किया और किताब मीजान अला अतराल दो सौ रूपये मे जाकर खरीदी और जब उस किताब का मुताला किया तो इबारत बिल्कुल दुरूस्त थी और इस के आगे पीछे मे भी कोई ऐसा अल्फाज न था जिस मे इस जुमले की नफी होती हो मेरी हैरत और बढ़ गई और वापिस लायलपूर (फैसलाबाद) आ गया । यहां आकर मीजान अला का मुकदमा पढ़ा तो वहां ये लिखा हुआ था कि जब असनाद (सनद) हदीस की बहस मे ये जुमला आ जाए कि 'सकुनत अनल बुखारी' तो इस का मतलब ये होगा कि इमाम बुखारी रह0 या दूसरे मुहद्दिसीन ने इस रावी को हद से ज्यादा जईफ करार दिया और इस को इस काबिल ही नहीं समझा की इस के मुत्तालिक कोई बहस की जाये । यानि वो ना काबिले एतबार है और इस मुत्तालिक कहा करते थे कि छोड़ो इस रावी को ये भी कोई मुहद्दीस है ? कि इस पर कोई तवज्जो दी जाये यानि सिरे से ये इस काबिल ही नहीं कि इस का मुहद्दिसीन की लिस्ट मे नाम लिया जाए तो 'सकुनत अनल बुखारी' का मतलब इस कायदा के मुताबि ये हुआ कि इमाम बुखारी रह0 ने इस के मुत्तालिक कोई बात करना ही गंवारा नहीं किया । जब ये हकीकत मुझ पर खुली तो मैने मौलाना सरफराज खान साहब को लिखा कि मज़हबी ताअ्असुब मे आकर दयानतदारी छोड़ देना एक आलिम के शान शायान नहीं तो उन्होने ने मुझे इस का कोई जवाब ही नहीं दिया । अर्सा के बाद जब उन से मुलाकात हुई तो सिर्फ जबानी फरमाया कि मौलवी साहब ऐसे इख्तलाफी मसाईल मे हकीकत ये है कि अहादिस हनफियो के खिलाफ है बस ऐसे जईफ सहारो से ही काम लेना पड़ता है । इस से मेरे ज़हन पर जबरदस्त चोट लगी और अफसोस हुआ कि दीन के मामले मे ये तर्जे अमल तो खालिस यहूदी उलमा के है चुनांचे इन वजूहात की बिना पर मैने एक तरफ मदरसा चलाने से मआज़रत (माफी) कर ली और दूसरी तरफ तकलीदी जहनीयत को बिल्कुल तर्क कर दिया और इल्मी मज़ाहिब का मुताला शुरू किया और मुसलमानो के मुख्तलिफ फिर्को का खुले दिमाग से मुताला गया । और कुरआन व हदीस को को खुले दिमाग से समझना अपना नसबूल ऐन बना लिया । चूनांचे चंद बरसो के मुताला के बाद मै इस नतीजे पर पहुंचा कि मुसलमानो के इख्तेलाफी मसाईल मे हक ये है कि जो कुछ कुरआन व हदीस मे मिले इस को कुबूल किया जाये, और वो बाते जो कुरआन व हदीस के खिलाफ हो उन को रद्द किया जाये, क्योकि पैगम्बर सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम के सिवा कोई इंसान मासूम नहीं तो फिर हम गैर मासूम इंसानो की तकलीद क्यो करे तर्के तकलीद ना सिर्फ ये कि मैने अपना मसलक बना लिया बल्कि मेरे नजदीक किसी भी आलिम के लिये तकलीद जायज नहीं और गरीब अवाम तो उलमा के ताबे होते है वो माजूर है मगर उलमा के लिये तकलीद करना कतअन हराम है जब एक मुसलमान कलमा ला ईलाहा इल्लाल्लाह मुहम्मदर रसूलुल्लाह पढ़ता है तो इस के पहले हिस्से का मतलब है कि इंसान दिल से ये अहद करे कि मैने अपना मालिक व हाकिम सिर्फ अल्लाह को बनाया है और इसी के हुक्मो पर मैने चलना है और दुसरे हिस्से का मतलब है कि ये हज़रत मुहम्मद सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम की नबूवत का वही हुक्म मैने मानना है जो हज़रत मुहम्मद सल्लाल्लाहू के ज़रिये मुझ तक पहुंचा है । हर मुसलमान जब दिल से सिर्फ अल्लाह और उस के रसूल की बातो को मानने का अहद करता है तो फिर किसी मुसलमान के लिये ये कतअन जायज़ नहीं कि वह कुरआन व हदीस के सिवा किसी दूसरे इंसान की तकलीद करे और ताअ्असुब मे आकर आंखे बंद कर ले । याद रखे जिस तरह अल्लाह के सिवा किसी दूसरे का हुक्म मानना शिर्क है इसी तरह हज़रत मुहम्मद मुस्तफा सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम के

सिवा किसी दूसरे का हुक्म माना भी शिर्क फी अल रिसालत है । तकलीद तो अवाम के लिये भी हराम है और उलमा के लिये तो इस से भी ज्यादा हराम है । मगर उलमा इस जुर्म मे अवाम की तरफ से भी जिम्मेदार है क्योकि वो अवाम को गिरोहबंदी मे बांट कर तकलीद करने पर मजबूर करते है हालांकि इमान का तकाज़ा ये है कि कुरआन व हदीस के मुकाबले मे किसी बड़े से बड़े शख्स की बात को भी ठुकरा दे । हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि0 का ये वाक्या तारीख–ए–इस्लाम मे मशहूर है कि हज के मौके पर उन से किसी ने मसला पूछा तो आप ने फरमाया इस मसले मे रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम का फरमान ये है तो साईल ने कहा आप के वालिद मोहतरम हज़रत उमर रजि0 तो इस के खिलाफ बयान करते थे हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि0 गुस्से मे आ गये और फरमाया क्या मुहम्मद रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम इत्तेबाअ किये जाने के ज्यादा हकदार है या उमर रजि0 (अहकामुल हाकिम जिल्द 2 बहस रद्दे तकलीद) है । सच्चे ईमान की निशानी कि अल्लाह और उस के रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम के फरमान के खिलाफ ख्वाह किसी जलीलुकद्र सहाबी की बात ही क्यो न हो उस को भी रद्द कर दिया जायेगा । यही दावत जमाअते अहले हदीस की है ।

और मै अहले हदीस हो गया

अब मेरे सामने दो ही रास्ते थे एक तकलीदी मज़हब का जिस का मतलब ये था कि जो मसाईल हनफी फिकहा की किताबो मे दर्ज है उन को मै दिल से अल्लाह के अहकाम मान कर उन के मुताबिक अमल करूं । और दसूरा रास्ता तहकीकी मज़हब का था जिस का मतलब ये था कि मै किताबुल्लाह और सुन्नते रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम के मुताबिक अमल करने का अहद करता । तो मैने दयानतदारी से दूसरा रास्ता इख्तेयार किया और पहले रास्ते को रद्द कर दिया यही दूसरा रास्ता मसलक अहले हदीस है । जिस का मतलब किसी खास तबके की तकलीद करना नहीं बल्कि कुरआन व हदीस पर इमान लाकर उन के मुताबिक अमल करना है । लेहाज़ा मैने मज़कुरा बाला मुख्तलिफ दौर से गुजरने के बाद मसलक अहले हदीस को इख्तेयार किया और इस का एलान भी कर दिया । इस के बाद नमाज़ तरावीह, फातिहा खलफुल इमाम, अहकाम–ए–नमाजे जनाज़ा वगैरह जैसे मसले पर छोटे छोटे रिसाले भी लिख कर तकसीम करा चुका हूं ताकि दूसरे मुसलमानो को भी खुदावंद कुद्दुस हिदायत नसीब फरमा दे । और वो तकलीद तर्क कर के सुन्नते रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम पर अमल पैरा होकर अपनी आकबत (आखिरत) संवारे । इस मुख्तसिर सी तहरीर का मतलब यही है कि अल्लाह ततआला इस के मुताला से मुसलमानो को इत्तेबाए सुन्नत रसुल सल्लाल्लाहू अलैहि वसल्लम की तौफीक मरहमत फरमाएं (आमीन)

इस्लामिक दावाअ सेन्टर,
रायपुर छत्तीसगढ़